चौर क्षेत्र में मात्स्यिकी द्वारा जीविकोत्थान के अवसर

एम. ए. हसन
मो. आफताबुद्दीन
पंकज पटियाल
अरुण कुमार बोस

बुलेटिन न : 184 फरवरी, 2014

केन्द्रीय अंतर्स्थलीय मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
बैरकपुर, कोलकाता – 700120

हर कदम, हर डगर
किसानों का हमसफर
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
Agrisearch with a human touch

चौर क्षेत्र में मात्स्यिकी द्वारा जीविकोत्थान के अवसर

एम. ए. हसन
मो. आफताबुद्दीन
पंकज पटियाल
अरुण कुमार बोस

बुलेटिन न. 190 जनवरी, 2014

केन्द्रीय अन्तर्स्थलीय मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान
(भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्)
बैरकपुर, कोलकाता–700120, पश्चिम बंगाल

चौर क्षेत्र में मात्स्यिकी द्वारा जीविकोत्थान के अवसर

एम. ए. हसन
मो. आफताबुद्दीन
पंकज पटियाल
अरुण कुमार बोस

प्रकाशक : निदेशक
केन्द्रीय अंतर्स्थलीय मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान
बैरकपुर, कोलकाता–700120, पश्चिम बंगाल

सम्पादकीय सहयोग : मो0 कासिम

सहायता : डा0 नर्वदा प्रसाद श्रीवास्तव और रन्जू राणा पटियाल

कवर डिज़ाइन : श्री पंकज पटियाल

इस पत्रिका में प्रकाशित सामग्री प्रकाशक की अनुमति के बिना कहीं भी प्रस्तुत करना वर्जित है।

ISSN 0970-616X

© 2014 केन्द्रीय अन्तर्स्थलीय मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान, बैरकपुर

मुद्रक का नाम एवं पता : मेसर्स ईस्टर्न प्रिंटिंग प्रोसेसर, 93, दक्षिणदारी रोड, कोलकाता – 700048

प्राक्कथन

बिहार प्राचीन संस्कृति तथा समृद्ध विरासत वाला राज्य है। बिहार की अर्थव्यवस्था काफी हद तक कृषि प्रधान है और यहाँ लोगों की आजीविका कृषि, पशुपालन तथा मात्स्यिकी पर निर्भर करती है। बिहार मुख्य रूप से गंगा, गंडक और कोशी नदी घाटियों की उपजाऊ जलोढ़ मिट्टी से परिपूर्ण है जिनमें मात्स्यिकी संस्थान जैसे बाढ़कृत आर्द्रक्षेत्र–चौर तथा मन प्रचुर मात्रा में हैं। बिहार के मात्स्यिकी संसाधन अप्रयुक्त क्षमता से भरपूर है। इन संसाधनों के बावजूद मत्स्य उत्पादन बहुत कम है। राज्य का वार्षिक मत्स्य उत्पादन केवल 0.265 मि.टन है जबकि मांग 0.495 मि.टन की है। जाहिर तौर पर मांग और आपूर्ति के बीच 48% का बड़ा अन्तराल है। चौर संसाधनों के विकास द्वारा 2.6 लाख टन के उत्पादन को दो गुणा करके माँग और आपूर्ति के बीच के अन्तराल को कम किया जा सकता है। समुदाय सहभागिता, ज्ञान सशक्तिकरण तथा मत्स्य पालन की उपलब्ध तकनीकों को अपनाकर ही इन संसाधनों का समुचित विकास संभव है।

प्रस्तुत बुलेटिन 'चौर में मात्स्यिकी द्वारा जीविकोत्थान के अवसर' राष्ट्रीय कृषि नवोन्मेषी परियोजना–III के अन्तर्गत प्रकाशित किया गया है। यह बुलेटिन चौर प्रबन्धन के विभिन्न आयामों द्वारा मत्स्य उत्पादन तथा जीविका के अवसर बढ़ाने पर प्रकाश डालता है। यह बुलेटिन सरल, स्पष्ट तथा व्यवहार्य हिन्दी में प्रस्तुत किया गया है ताकि इसे हर स्तर के समुदाय तक पहुंचाया जा सके।

मैं इस प्रकाशन से जुड़े सभी लोगों को हार्दिक बधाई देता हूँ। साथ ही आशा करता हूँ कि बिहार के अलावा देश के अन्य राज्यों में मत्स्य पालन से जुड़े लोग इस बुलेटिन का अधिक से अधिक फायदा उठा सकेंगे।

प्रो. अनिल प्रकाश शर्मा
निदेशक
केन्द्रीय अंतर्स्थलीय मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान
बैरकपुर

बिषय सूची

क्रम सं.	विषय	लेखक	पृष्ठ
1.	आजीविका उन्नति के लिए मत्स्य–पालन प्रौद्योगिकी	एम. ए. हसन	1
2.	चौर में मत्स्य प्रबंधन	एम. ए. हसन और पंकज पटियाल	2
3.	पेन में मत्स्य–पालन द्वारा उत्पादकता में वृद्धि	एम. ए. हसन और मो. आफताबुद्दीन	5
4.	बरैला चौर में सफलतापूर्वक पेन कल्चर बिहार में एक अनुभव	एम. ए. हसन अरुण कुमार बोस और पंकज पटियाल	9
5.	चौर संसाधनों में पिंजरा पद्धति द्वारा मत्स्य पालन से उत्पादकता में वृद्धि	अरुण कुमार बोस	11
6.	एकीकृत; समन्वित मछली पालन	पंकज पटियाल	13
7.	बिहार में टिकाऊ और स्थाई चौर मात्स्यिकी के लिए समूह दृष्टिकोण	अपर्णा रॉय	16
8.	विपरीत परिस्थितियों में चौर क्षेत्र के पानी का समुचित उपयोग	सुबोध कुमार	20

आजीविका उन्नति के लिए मत्स्य-पालन प्रौद्योगिकी

एम. ए. हसन
केन्द्रीय अन्तर्स्थलीय मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान
बैरकपुर, कोलकाता– 700120, पश्चिम बंगाल

प्राचीन युग से ही मात्स्यिकी मानव जाति के लिए भोजन, रोज़गार आजीविका तथा आर्थिक लाभ का महत्वपूर्ण स्त्रोत रहा है। मात्स्यिकी दुनिया भर में एक अरब से ज्यादा लोगों के लिए आहार एवं लगभग 38 मिलियन से भी ज्यादा लोगों के लिए रोज़गार का मुख्य साधन है। इसके अलावा अंतर्स्थलीय मत्स्य–पालन का मात्स्यिकी क्षेत्र के रोज़गार में सबसे बड़ा योगदान है। विश्व में रोज़गार की 15 प्रतिशत भागीदारी मत्स्य पालन क्षेत्र से जुड़ी हुई है। मछली भारतीय परिवारों के भोजन एवं प्रोटीन पूर्ति का मुख्य साधन है। इसके अलावा हमारे देश में मत्स्य का सामाजिक व सांस्कृतिक, परम्पराओं एवं रीति–रिवाजों में भी महत्व परिलक्षित है। भारत में मत्स्य–पालन रोज़गार, आहार, पोषण के अलावा विदेशी मुद्रा अर्जित कर भारतीय अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ बनाने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। भारतीय जनसंख्या में से लगभग 60 लाख लोग आजीविका के लिए इस क्षेत्र पर निर्भर हैं।

भारत में जलकृषि का मत्स्य–पालन में योगदान सबसे ज्यादा है तथा भारत में मत्स्य पालन काफी पुरानी प्रथा है। बिहार एक अंतर्स्थलीय राज्य है जो जल संसाधनों से परिपूर्ण एवं सम्पन्न है। बिहार के जलीय संसाधनों में नदी, पोखर, जलाशय तथा मान एवं चौर मुख्य रूप से आते हैं। बिहार के इन जलीय संसाधनों में चौर की बहुतायात है जिसका योगदान 2,00,000 हेक्टर से भी ज्यादा है। चौर प्राकृतिक रूप से छिछला होता है जिसमें पानी का बहाव कम होता है जो वर्षा, बाढ़ तथा नदियों से जुड़े नालों से आने वाले पानी से भरा रहता है। चौर जैव–विविधता के दृष्टिकोण से अति महत्वपूर्ण होता है, साथ ही साथ मत्स्य पालन एवं मत्स्य विविधता के लिए भी उपयुक्त एवं महत्वपूर्ण संसाधन के रूप में जाना जाता है। चौर मुख्यतः दो प्रकार के होते हैं –

(1) मौसमी चौर – जिसमें साल के कुछ महीनों में पानी रहता है
(2) बारहमासी चौर – जिसमें साल भर पानी रहता है।

इन उपयुक्त एवं महत्वपूर्ण जल संसाधनों की उपस्थिति के कारण ही बिहार में मत्स्य–पालन की काफी संभावना है। परन्तु इनका अब तक समुचित विकास, उपयोग एवं प्रबंधन नहीं होने के कारण, काफी कम मत्स्य उत्पादन होता आ रहा है। आवश्यक रणनीति, सही तकनीक तथा समुचित प्रबंधन द्वारा उत्पादकता बढ़ाकर आजीविका एवं रोजगार को नई दिशाएं दी जा सकती हैं। चौर का विकास करने के लिए इसका समुचित प्रबन्धन तथा जल का सही उपयोग करना चाहिए। खुले जल संसाधनों के अनियंत्रित जल क्षेत्र होने के कारण इनमें मत्स्य पालन एवं प्रबंधन एक बहुत बड़ी समस्या है। प्रदेश के इन जलीय संसाधनों की पारिस्थितिकी को देखते हुए विभिन्न प्रौद्योगिकियों जैसे पेन कल्चर, केज कल्चर के माध्यम से जलीय वातावरण और उत्पादकता के अनुसार आवश्यक प्रजाति, माप/आकार तथा संचयन दर के साथ मत्स्य–पालन कर उत्पादकता बढ़ाई जा सकती है। इसके अलावा चौर के समन्वित प्रबंधन द्वारा एकीकृत मत्स्य पालन कर राज्य में आजीविका को समृद्ध करने, खाद्यान्न सुरक्षा के साथ समाजिक ढ़ांचे को मज़बूत करने का अद्वितीय अवसर प्रदान किया जा सकता है। इन्हीं अवसरों के कारण हाल के समय में विभिन्न सामाजिक तथा जातिय समूहों द्वारा इन संसाधनों का सही आंकलन और संरक्षण कर उन्नत तकनीकों के माध्यम से संवहनीय उपयोग एवं दोहन के विभिन्न प्रयास किये जा रहे हैं।

चौर में मत्स्य प्रबंधन

एम. ए. हसन और पंकज पटियाल
केन्द्रीय अन्तर्स्थलीय मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान
बैरकपुर, कोलकाता– 700120, पश्चिम बंगाल

बिहार के चौर क्षेत्र उथले (कम गहराई वाले) तथा पोषक तत्वों से भरपूर होते हैं। इन्हीं पोषक तत्वों के कारण चौर क्षेत्र में जलीय पौधों की वृद्धि अधिक होती है। जलीय पौधों की अनियंत्रित वृद्धि मत्स्य उत्पादन में मुख्य बाधा है। अतः इन पौधों का उन्मूलन आवश्यक है। बाढ़ के समय चौर, पानी और परभक्षी जीवों (मछली, सांप) से भर जाते हैं। बाढ़ के बाद चौर क्षेत्र बड़ी झील की तरह प्रतीत होते हैं। जैसे ही पानी कम होता है तो चौर बड़े जलाशय का रूप ले लेते हैं जिसमें बाढ़ के साथ आई मछलियाँ तथा संचयित मछलियाँ बाहर नहीं जा पातीं। गरई, सोरा, बुआरी, वामी, पोठी और कवई आदि मछलियाँ चौर क्षेत्र में पाई जाती हैं। बिहार के चौर क्षेत्रों में मत्स्य उत्पादन क्षमता के विपरीत बहुत ही कम (40–50 किलो/हे0/वर्ष) है। वैज्ञानिक तरीके से मात्स्यिकी प्रबंधन द्वारा मत्स्य उत्पादन को बढ़ाया जा सकता है जिससे मछुआरों की आजीविका में भी वृद्धि होगी है।

मात्स्यिकी प्रबंधन

चौर में बड़े आकार की अंगुलिकाओं (50–100 ग्रा0) का संचयन करना चाहिए क्योंकि चौर में मत्स्यभक्षी मछलियाँ, सांप और पक्षी होते हैं। इसके अतिरिक्त चौर में पानी साल भर नहीं रहता तथा पानी सूखने का भी डर रहता है। बेहतर होगा कि पिछले साल की 'स्टंडड' अंगुलिकाएँ हों । ये अंगुलिकाएँ चौर में तेज़ी से बढ़ती हैं और 4 से 5 महीनों में बाज़ार में बेचने योग्य हो जाती हैं।

मत्स्य प्रजातियों का चयन

विश्लेषण में यह देखा गया है कि चौर मृत जैव पदार्थों, जलीय पौधों तथा प्लवकों से परिपूर्ण हैं। जलमग्न पौधे (जैसे– हाइड्रिला, वेलिसनेरिया, ओटेलिया) नरम होते हैं तथा कई मछलियाँ इनसे अपना आहार प्राप्त करती हैं, जैसे कि ग्रास कार्प। जलीय पौधों पर पाए जाने वाले शैवाल तथा सूक्ष्म जीव रोहू मछली द्वारा खाए जाते हैं। कतला जन्तु प्लवक खाती है और कॉमन कार्प तथा नयनी मृत जैव पदार्थों को खाती हैं। अतः चौर क्षेत्रों में ग्रास कार्प, कॉमन कार्प, कतला, रोहू और नयनी का संचयन उपयुक्त है।

हाइड्रिला

वेलिसनेरिया

ओटेलिया

कतला

रोहू

नयनी

ग्रास कार्प

कॉमन कार्प

संचयन तथा प्रग्रहण

प्रयोग और सर्वेक्षण से पता चला है कि बिहार के चौर क्षेत्रों में 1.0 से 1.5 टन/हे. उपज प्राप्त की जा सकती है। 1.0 से 1.5 टन/हे. उत्पादन के लिए 2500 से 3500 अंगुलिकाएँ/हे. का संचयन करना चाहिए। संचयन तथा प्रग्रहण दो चरणों में किया जाना चाहिए।

1) फरवरी के महीने में जब तापमान, जलीय उत्पादकता तथा जैव पदार्थों की अपघटन दर बढ़ रही होती है तब उन्नत अंगुलिकाओं का संचयन करना चाहिए। इन मछलियों का प्रग्रहण जून के महीने में बाढ़ आने से पहले कर लेना चाहिए।

2) बिहार में अगस्त से सितम्बर महीने तक बाढ़ की संभावना रहती है इसलिए जुलाई, अगस्त और सितम्बर महीनों में पेन द्वारा चौर के भीतर मत्स्य बीज उत्पादन करना चाहिए। बाढ़ के खत्म होने पर सितम्बर अन्त या अक्टूबर शुरू में पेन में उत्पादित मछलियों को चौर में छोड़ देना चाहिए। नवम्बर महीने के बाद तापमान कम होने लगता है और देशी कार्प मछलियों बहुत कम खाती हैं और उनकी वृद्धि तथा विकास में कमी आ जाती है। इस समय ग्रास कार्प और कॉमन कार्प तीव्र वृद्धि से अच्छा उत्पादन दे सकती हैं। इसलिए ग्रास कार्प और कॉमन कार्प मछलियां का अधिक से अधिक संचयन करना चाहिए। इन मछलियों को जनवरी से फरवरी महीने में चौर से निकाल कर बेचा जा सकता है।

पेन में मत्स्य-पालन द्वारा उत्पादकता में वृद्धि

एम. ए. हसन, और मो. आफताबुद्दीन
केन्द्रीय अन्तर्स्थलीय मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान
बैरकपुर, कोलकाता– 700120, पश्चिम बंगाल

बिहार राज्य जलीय और मात्स्यिकी संसाधनों से समृद्ध है। बिहार के जलीय क्षेत्रों में आर्द्र क्षेत्रों की बहुलता है जिन्हें स्थानीय भाषा में चौर तथा मान कहा जाता है, जो उच्च मत्स्य उत्पादन की क्षमता रखते हैं। परन्तु वार्षिक बाढ़, अवांछित जीवों (परभक्षी मछलियां, सांप, मेढ़क तथा पक्षी आदि), जलीय पौधे तथा अनियंत्रित जल क्षेत्र के कारणों से पूरे जल निकाय में मत्स्य उत्पादन करना कठिन हो जाता है। अतः ऐसे जल क्षेत्रों में पेन (घेरे) लगाकर मत्स्य–पालन सबसे उपयुक्त, सरल एवं सस्ती तकनीक माना जाता है। साथ ही साथ पेन में वैज्ञानिक तरीके से मात्स्यिकी प्रबंधन, उपयुक्त प्रजाति, आकार, संचयन तथा संग्रहण से उत्पादन कई गुणा बढ़ाया जा सकता है।

पेन क्या है?

पेन जल निकाय में बने उस घेरे को कहा जाता है जिसमें मछली पालन किया जाता है। पेन जाल या बांस की दीवार से बना एक स्थिर घेराव होता है जो ऊपर की तरफ खुला होता है तथा इसका निचला भाग जल स्त्रोत के तल में खुला रहता है।

पेन में मछली पालन के लाभ

खुले तथा अनियंत्रित जल क्षेत्र में आसानी से पालन प्रबंधन तथा प्रग्रहण किया जा सकता है। खरपतवारों, जलीय पौधों तथा अवरोध वाले जल क्षेत्रों में भी मत्स्य–पालन किया जा सकता है। पेन के घेरे में जल निकाय की निचली सतह मछलियों की पहुंच में होती है जहाँ से मछलियां प्राकृतिक आहार ले सकती हैं जो उनके विकास एवं वृद्धि के लिए उपयोगी है। अपनी आवश्यकता के अनुसार विशेष प्रजातियों का चयन कर पालन किया जा सकता है, जिससे अवांछित मछलियों तथा पौधों से भोजन एवं आक्सीजन के लिए प्रतिस्पर्धा नहीं रहती है। पूरक आहार तथा मछलियों के प्रबंधन में सुविधा होती है। परभक्षी तथा शिकारी जीवों से सुरक्षित रहती हैं एवं प्रग्रहण में सुविधा होती है। फलस्वरूप अत्याधिक मत्स्य उत्पादन होता है।

पेन में मछली पालन के लिए जल क्षेत्रों में स्थान का चयन

पेन की स्थापना के लिए चयनित प्रजातियों के अनुसार पेन के क्षेत्र में वर्ष भर में 4–8 महीनों तक स्थिर या धीमी गति से प्रवाहित जल होना चाहिए। पेन के लिए हल्की ढ़लान तथा 1 से 1.5 पानी की गहराई वाला स्थान उपयुक्त माना जाता है। चयनित स्थान की निचली सतह सख्त तथा तीव्र जल एवं अत्याधिक वायु प्रवाह से मुक्त होनी चाहिए। पेन का क्षेत्र प्रदूषण मुक्त होना चाहिए। पेन स्थापना का स्थान खुला होना चाहिए ताकि सूर्य की किरणें पेन के घेरे में पहुंच सके।

पेन की आकृति और आकार

पेन वर्गाकार, आयताकार या गोल हो सकता है। गोल पेन अन्य पेन की अपेक्षा किफायती होता है। मत्स्य बीज पालन में बेहतर प्रबंधन तथा उत्पादन के लिए पेन का आकार 0.05–0.2 हे. उपयुक्त होता है।

पेन की सामग्री और निमार्ण

पेन निर्माण के लिए स्थानीय स्तर पर उपलब्ध बांस जैसी सस्ती तथा टिकाऊ सामग्री का प्रयोग किया जाता है। इसके अलावा जाल का भी प्रयोग किया जाता है। पेन की दीवार को चीरे हुए बांस की पट्टियों तथा जाल को नारियल या नायलॉन की रस्सी से इस प्रकार बुना जाता है ताकि पानी का आदान प्रदान हो सके। हर 2 मी0 के अंतराल पर बांस का सीधा खम्भा गाढ़ा जाता है ताकि पेन की दीवार मज़बूती से खड़ी रहें। पेन की दीवार को तेज़ हवा से बचाने के लिए हर तीसरे खम्भे के साथ एक अतिरिक्त तिरछा खम्भा गाढ़ा जाता है। मत्स्य बीज को पेन से बाहर आने से बचाने के लिए दीवार के अंदर एक पतला जाल सिला जाता है। पेन की दीवार जल स्तर से कम से कम 0.5 मी0 ऊपर रहनी चाहिए ताकि मछलियां कूद कर बाहर नहीं निकल सकें। बांस के स्थान पर एच.डी.पी.ई. जाल का प्रयोग भी किया जा सकता है, जो आर्थिक दृष्टि से अधिक किफायती होता है। इसके अलावा एक मज़बूत तथा मोटा जाल (3.5 फीट ऊंचाई) से पेन के भीतर रहने वाला भाग बनाया जाता है। अंगुलिका प्राप्त करने के लिए जाल के फंदो का आकार 4 एम.एम. तथा बड़ी मछली

बांस की फांक

जाल की सिलाई

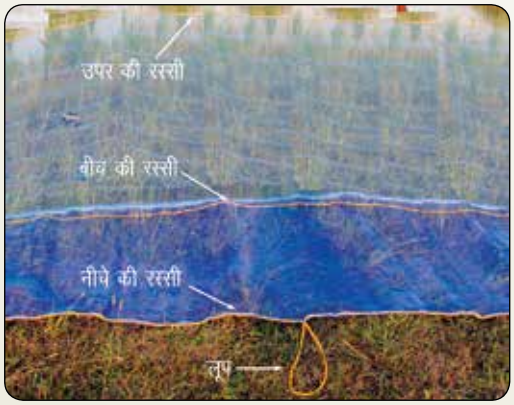

सिला हुआ जाल

आयताकार पेन

उत्पादन के लिए 10 एम.एम. से अधिक नहीं होना चाहिए, मोटे जाल के निचले किनारे से 7–8 एम.एम. मोटाई वाली रस्सी तथा ऊपरी किनारे से 4–5 एम.एम. मोटाई की रस्सी सिली जाती है। इन्हीं रस्सियों की सहायता से जाल को खम्भों से बांधा जाता है, सीधे गाढ़े गए खम्भों के निचले सिरे में एक फांक बनाई जाती है तथा मोटे जाल के निचले सिरे वाली रस्सी में लूप बनाये जाते हैं। बांस की फांक को लूप में कसकर गाढ़ दिया जाता है ताकि जाल की दीवार मिट्टी में धंस जाए।

पेन में मत्स्य बीज पालन के चरण

उचित समय पर आवश्यक प्रजातियों के बीज, बीज की माप या आकार तथा उनकी पर्याप्त मात्रा में उपलब्धता मत्स्य पालन की सफलता के मुख्य घटक हैं। इसी दृष्टिकोण से मत्स्य बीज पालन आर्थिक रूप से एक व्यवहार्य उद्यम के रूप में उभर रहा है। अन्य मत्स्य पालन तकनीकों की तुलना में पेन में मत्स्य बीज पालन एवं प्रबंधन काफी सरल होता है। साधारणतः पेन में मत्स्य बीज पालन के दो चरण होते हैं–

(1) धानी से अंगुलिका का उत्पादन,
(2) अंगुलिका से बड़ी मछली का उत्पादन

संचयन से पूर्व प्रबंधन

पेन में धानी से अंगुलिका उत्पादन के पहले जल क्षेत्र को अच्छी तरह से साफ कर लेना चाहिए। इसके लिए जाल चलाकर जल क्षेत्र में उपस्थित मत्स्यभक्षी मछलियों को निकाल लेते हैं, जलीय पौधों को हाथ से उखाड़कर बाहर किया जा सकता है। मछली के प्राकृतिक भोजन के लिए खाद का छिड़काव करना भी आवश्यक होता है। साथ ही साथ जल की गुणवत्ता को बनाये रखने के लिए 250–300 कि.ग्रा./हे. की दर से चूने का छिड़काव करना चाहिए।

संचयन

पेन में जलीय वातावरण एवं पारिस्थितिकी के अनुसार प्रजाति का चयन कर सही घनत्व दर तथा आवश्यक माप के अनुसार संचयन करना चाहिए। संचयन दर प्राकृतिक भोजन तथा पानी की गुणवत्ता पर निर्भर करती है। पेन में मत्स्य पालन के लिए कार्प प्रजातियां जैसे (कतला, रोहू, नयनी, बाटा तथा रेवा) उपयुक्त होती हैं। इनके अलावा ग्रास कार्प, सिल्वर कार्प, कामन कार्प, वायु श्वासी मछलियां जैसे (मागुर, सिंघी, केवई), तेलापिया, पंगास तथा मीठा जल झींगों का भी पालन किया जाता है। जिस स्थान पर जलीय पौधे हों वहां ग्रास कार्प का पालन किया जाना चाहिए। इसके अलावा विशेष आकार के मछली उत्पादन के लिए आवश्यक माप का बीज संचयन करना है। यदि हमें अंगुलिकाओं उत्पादन करना है तो पोना (जीरा अथवा धानी) का संचयन करना चाहिए और अगर हमें बड़ी मछलियों का उत्पादन करना है तो अंगुलिकाओं (80–100 एम.एम.) का संचयन करना चाहिए। पेन से अंगुलिकाएं प्राप्त करने के लिए साधारणतः 40–50 एम.एम. (4–5 से.मी.) के पोना 2,50,000 प्रति हे. की दर से संचयन किया जाता है जबकि बड़ी मछलियों के उत्पादन के लिए 100 एम.एम. (10 से.मी.) की अंगुलिकाओं का संचयन 4,000–5,000 प्रति हे. की दर से किया जाता है। साधारणतः चौर में जलीय पौधे एवं मलवा अथवा अपरद अधिक मात्रा में होती है। अतः ग्रास कार्प, कामन कार्प अथवा मृगल का संचयन अधिक होता है। प्रजातियों की संचयन दर निम्नलिखित रूप में होती है रू.

ग्रास कार्प – 50%
कामन कार्प – 20%
कतला – 10%
रोहू – 10%
नयनी – 10%

संचयन उपरांत प्रबंधन

मछलियों की बेहतर वृद्धि के लिए प्राकृतिक आहार के अलावा पूरक आहार भी दिया जाना आवश्यक है। पूरक आहार शारीरिक भार के 2–5 प्रतिशत की दर से दिन में 2 बार (सुबह एवं शाम) को दिया जाना चाहिए। मछलियों को शारीरिक रूप से स्वस्थ रखने के लिए उनके आवास तथा जल की गुणवत्ता का ध्यान रखना चाहिए तथा नियमित रूप से स्वास्थ्य एवं जल की जांच करनी चाहिए। समय–समय पर मछलियों की वृद्धि (लम्बाई और भार) की भी जांच करनी चाहिए। मछली में बीमारी होने पर उसे बाहर निकालकर तुरंत उपचार करना चाहिए। मृत मछली को तुरंत बाहर निकाल देना चाहिए। पेन की दीवार की सफाई एवं मरम्मत करनी चाहिए।

प्रग्रहण

निर्धारित माप के हो जाने के बाद सुबह या शाम के समय प्रग्रहण करना चाहिए। चूंकि पेन में थोड़ी बड़ी माप के पोनों का संचयन किया जाता है, अतः इनकी उत्तरजीविता ज्यादा होती है। अंगुलिकाएं 2 महीने में 10 से0मी0 (15 ग्रा0) ये अधिक हो जाती हैं। 2 महीने में प्रति हे. 127930 अंगुलिकाओं का उत्पादन किया जा सकता है जबकि बड़ी मछली (औसत भार 800 ग्रा0) उत्पादन में 2,880–3,600 कि0ग्रा0/हे0 उपज 6 महीनों में प्राप्त की जा सकती है।

आर्थिकी

पेन में मत्स्य बीज पालन की आर्थिकी निकाली गयी है जोकि जन्दाहा (वैशाली) में प्रचलित मूल्यों पर आधारित है। प्रथम वर्ष में अंगुलिकाओं की 2 तथा द्वितीय और तृतीय वर्ष में 3 फसलें प्राप्त की जा सकती हैं। प्रथम वर्ष 0.1 हे0 के पेन के लिए स्थिर लागत रू. 11,350/– तथा परिवर्तनशील लागत रू. 35,720/– परिकलित की गयी है। द्वितीय और तृतीय वर्ष में मज़दूर तथा सामग्री के रूप में थोड़ा अतिरिक्त व्यय होता है। 0.1 हे0 के पेन से प्रथम वर्ष रू. 29,688/– तथा द्वितीय और तृतीय वर्ष रू. 58,957/– की शुद्ध आय प्राप्त की जा सकती है। पेन में मत्स्य बीज पालन के लिए B:C (लाभः खर्च) अनुपात 1.93 प्राप्त किया गया है।

इसी प्रकार एक हेक्टर पेन में बड़ी मछली उत्पादन से 6 महीानों में 3,45,600–4,32,000 रू. की आय प्राप्त की जा सकती है।

बरैला चौर में सफलतापूर्वक पेन कल्चर - बिहार में एक अनुभव

एम. ए. हसन, अरुण कुमार बोस और पंकज पटियाल
केन्द्रीय अन्तर्स्थलीय मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान
बैरकपुर, कोलकाता– 700120, पश्चिम बंगाल

बिहार के लगभग 2 लाख हे0 से अधिक बाढ़कृत आद्रक्षेत्र मत्स्य पालन बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। ये कम गहराई वाले और जलीय पौधों से भरे हुए चौर क्षेत्र बंजर भूमि माने जाते हैं जिन्हें मत्स्य प्रबन्धन की वैज्ञानिक तकनीकों द्वारा बहुमूल्य भूमि में परिवर्तित किया जा सकता है। ऐसे ही एक क्षेत्र, बरेला चौर, पातेपुर ब्लॉक, वैशाली, उत्तर बिहार में स्थित है। चौर के आस पास मुख्य रूप से मछुआरों (सहनी) का निवास स्थान है जो कि मछली पकड़कर अपना जीवन यापन करते हैं। बाढ़, जलीय पौधे तथा चौर भूमि पर बहूस्वामित्व बरेला चौर में मत्स्य उत्पादन की मुख्य बाधाएं हैं। एन.ए.आई.पी –III परियोजना के अन्तर्गत सकरी चौर, जन्दाहा कलस्टर में मत्स्य पालन प्रौद्योगिकी (पेन कल्चर) द्वारा स्थानीय लोगों की आजीविका सुधारने का कार्य किया जा रहा था। पड़ोसी गाँव दुलौर के मछुआरे सकरी चौर में किए गए कार्य–कलापों से प्रेरित हुए। वे चाहते थे कि इस तरह का काम उनके लिए बरेला चौर में भी किया जाए। प्रौद्योगिकी प्रसार की संभावनाओं को ध्यान में रखते हुए दुलौर के मछुआरों को समूह बनाने के लिए प्रेरित किया गया ताकि उन्हें आवश्यक सामग्री दी जा सके। उसके बाद ज्ञान सशक्तिकरण के लिए दस मछुआरों के एक समूह को केन्द्रीय अनुसंधान संस्थान (सीफरी), बैरकपुर में एन.ए.आई.पी. के अन्तर्गत प्रशिक्षण दिया गया। प्रशिक्षण के बाद मछुआरों ने बरेला चौर में पेन कल्चर को अपनाने में रूचि जताई। सीफरी ने पेन कल्चर तकनीक द्वारा सहभागिता प्रणाली के माध्यम से काम करना शुरू किया। सीफरी द्वारा समूह को जिम्मेदार बनाने और उनकी सहभागिता को जागरूक करने के लिए पेन कल्चर की पूरी प्रक्रिया का 50% खर्च मछुआरों से लिया गया तथा 50% एन.ए.आई.पी. द्वारा दिया गया। 1.0 हे0 क्षेत्र को घेरने के लिए 330 मी0 एच.डी.पी.ई. से बना जाल दिया गया जबकि चौथी ओर हल्का ऊंचा बाँध था। समूह को पेन की स्थापना तथा प्रबन्धन के लिए तकनीकी सहायता प्रदान की गई। चौर की पारिस्थितिकी को ध्यान में रखते हुए कतला, रोहू, नयनी, ग्रास कार्प तथा कामन कार्प की 400 कि.

ग्रा. (11660 सं0) अंगुलिकाएं पेन में संचयित की गई। मछलियों को कोई भी पूरक आहार नहीं दिया गया।

पांच महीनों में 61.49% उत्तरजीविता के साथ 2.77 टन (7170 सं0) मछलियां निकाली गई। पेन कल्चर द्वारा मछुआरों को रू. 2,13,330/– (21,333 रू./समूह सदस्य) की अतिरिक्त शुद्ध आय प्राप्त हुई जो कि लगभग 106 श्रम दिवस के बराबर हैं। पेन कल्चर के लिए लाभःखर्च अनुपात 2.33 प्राप्त किया गया। सफलता और लाभ प्राप्त करने के बाद समूह ने पेन क्षेत्र को अगले सीज़न के लिए 2 हे0 तथा उससे अगले सीज़न के लिए 4 हे0 बढ़ा दिया। दुलौर गाँव के समूह द्वारा बरेला चौर में पेन कल्चर को अपनाना बिहार के चौर क्षेत्रों में मत्स्य विकास के लिए एक मॉडल बन गया है।

चौर संसाधनों में पिंजरा पद्धति द्वारा मत्स्य पालन से उत्पादकता में वृद्धि

अरुण कुमार बोस
केन्द्रीय अन्तर्स्थलीय मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान
बैरकपुर, कोलकाता– 700120, पश्चिम बंगाल

वायुश्वासी मछलियां अपने स्वाद पोषक तत्वों तथा उपचारात्मक गुणों के लिए जानी जाती हैं। इसलिए इनकी मांग न केवल देश में बल्कि विदेशों में भी है तथा इनका विक्रय मूल्य दूसरी मछलियों की तुलना में काफी ज्यादा होता है। कुछ राज्यों में इनका मूल्य 400 रू. प्रति कि.ग्रा. से भी अधिक है। इनका विकास, वृद्धि तथा उत्तरजीविता भी दूसरी मछलियों की तुलना में अधिक होती है। इन मछलियों का प्रबंधन दूसरी मछलियों से कम होने के कारण इनका पालन भी आसान होता है। साथ ही इनकी सहनीय क्षमता भी अधिक होती है। इन्हीं दृष्टिकोणों से आर्थिक बचत से भी लाभदायक होता है। वायु श्वासी मछलियों को कम जल तथा कम गुणवत्ता वाले जल में भी पालन किया जा सकता है। इनका संग्रहण घनत्व अन्य मछलियों से ज्यादा होने के कारण जल क्षेत्र का पूर्ण उपयोग संभव है। परन्तु अभी भी इनकी उपलब्धता इनकी मांग की अपेक्षा काफी कम है, जिसका मुख्य कारण है इसके बीज एवं पालन संबंधी उद्योगों का सीमित मात्रा में होना है। फलस्वरूप इनके उत्पादन की अपार संभावनाएं हैं।

वायु श्वासी मछलियों में मुख्य रूप से मागुर, सिंघी तथा केवई का पिंजरों में उत्पादन किया जा सकता है। पिंजरों में वायु श्वासी मछलियों का पालन बारहमासी चौर एवं मौसमी चौर दोनों में संभव है। परन्तु ऐसे चौर जिसमें जल की मात्रा कम होती है तथा अन्य मछलियों का पालन संभव नहीं हो पाता है, में करने से बेकार पड़े जल क्षेत्र का भी उपयोग हो जाता है, वायु श्वासी मछलियां तल में रहती हैं, अतः बाहर से पानी डालने की जरूरत भी नहीं पड़ती है। इसके अलावा पिंजरें में पालन करने से इनका प्रबंधन, प्रग्रहण आसान हो जाता है। चूंकि वायु श्वासी मछलियां पानी की सतह पर आकर श्वास लेती है, फलस्वरूप वायु श्वासी मछलियों का पिंजरा पानी की सतह से 1–2 मी. उंचाई तक होना चाहिए, ताकि इन्हें सतह पर आक्सीजन लेने में आसानी हो सके।

मागुर पालन

मागुर सभी उष्णकटीबंधीय एवं उपउष्णकटीबंधीय जलवायु में व्यापक रूप से पायी जाती है। आम तौर पर 150–200 ग्रा. वजन एवं दो वर्ष की मागुर पूरी तरह से परिपक्व हो जाती है। 12–14 दिन का मागुर का पोना (10–20 एम.एम.) माप का संचयन के लिए उपयुक्त समझा जाता है। मागुर के पोना का संचयन, केज में मिट्टी के तलाब में तथा सीमेंट के हौज में किया जा सकता है। तेज़ी से वृद्धि तथा अधिक उत्तरजीविता

के लिए उपयुक्त घनत्व, जल की अच्छी गुणवत्ता एवं उपयुक्त आहार का होना अति अवश्यक होता है। साधारणतः अच्छी उत्तरजीविता एवं वृद्धि के लिए 200–300 पोना प्रति घनमीटर की दर से संचयन उपयुक्त होता है। छोटे आकार का सिमेंट हौज (10–20 वर्ग मी.) अच्छी उत्तरजीविता तथा प्रबंधन के लिए उपयुक्त होता है। सीमेंट हौज के निचले सतह पर 5–8 से.मी. मिट्टी की परत दी जाता है इसके अलावा 25–30 से.मी. तक जल का होना आवश्यक होता है। इसके अलावा 3x3x3 मी. का केज मागुर के लिए उपयुक्त होता है। संचयन तालाब अथवा हौज में पिंजरे के स्थान में खाद के रूप में गाय का गोबर का इस्तेमाल किया जा सकता है। संचयन तालाब अथवा हौज तथा पिंजरे की तैयारी के 6–7 दिन बाद जब इसमें प्लवक दिखाई पड़ने पर पोनों का संचयन किया जाता है। संचयन के पश्चात् तालाब में कुछ प्लवमान जलीय पौधा जैसे जलकुम्भी इत्यादि डाल देते हैं ताकि उन्हें शरण स्थान अथवा आश्रय मिल सके। पोना को 30–35 प्रतिशत वाला आहार एक महीने तक दिया जाना चाहिए। खाने योग्य मागुर मछली उत्पादन के लिए लगभग 1 ग्रा. वजन का 45–50 दिनों का उन्नत पोनों का संचयन 50,000–70,000 प्रति हेक्टेयर की दर से किया जाता है। 3–5 प्रतिशत शारीरिक भार की दर से भोजन कम मात्रा में तालाब की विभिन्न जगहों पर टोकरी में रखकर दिया जाता है। चूंकि मागुर वायु श्वासी मछली है, इसलिए यह सांस लेने के लिए पानी की सतह पर आकर वातावरण से ऑक्सीजन लेती है जिससे चिड़ियों द्वारा शिकार का खतरा बना रहता है। इसलिए तालाब के ऊपर बड़े फंदे वाला जाल बिछा दिया जाता है। 7–8 महीने के संचयन के बाद पोना मछली खाने योग्य हो जाती है। इस समय इनका वजन 100 ग्रा. तक हो जाता है। मागुर के प्रग्रहण के लिए तालाब से पानी बाहर निकाल कर उन्हें पकड़ लिया जाता है। इसके अलावा पिंजरे से प्रग्रहण के लिए पिंजरे को समेट कर पानी से निकालकर आसानी से प्रग्रहण कर लेते हैं। इस तरह के पालन से 3–4 टन तक की उपज प्राप्त की जा सकती है।

सिंघी पालन

सिंघीं मछली को डंस मारने वाली मछली भी कहा जाता है। इनका जलकृषि में एक महत्वपूर्ण स्थान माना जाता है, जो अपने सहायक श्वास अंग के कारण छिछला तथा कम ऑक्सीजन वाले जल क्षेत्र में जीवनयापन करने में सक्षम है। देश के अन्तर्स्थलीय मत्स्य अवतरण की 15 प्रतिशत भागीदारी सिंघी मछली की है। यह पोखर, तालाब, नदी, मान एवं चौर में पाई जाती हैं। सिंघीं मछली को मागुर की तरह मिट्टी के तालाब, सीमेंट का हौज एवं केज में पाला जा सकता है। सिंघीं का सहायक श्वास अंग 10–12 दिन में विकसित हो जाता है। 12–15 एम.एम. माप का 14–15 दिनों का सिंघीं का पोना संचयन के लिए उपयुक्त होता है। सिंघीं को एकल पद्धति तथा मिश्रित पद्धति से पाला जा सकता है। बेहतर वृद्धि तथा उत्तरजीविता के लिए 300–500 पोना प्रति घन मी. की दर से संचयन करना चाहिए। सिंघीं प्राकृतिक रूप से सर्वहारी होती है। इसे पूरक आहार के रूप में मछली का छोटा टुकड़ा या घोंघा का छोटा टुकड़ा को चावल के छिलके के साथ बराबर मात्रा में देते हैं। इसके अलावा सूखी मछली का चूर्ण (20 प्रतिशत) मूंगफली खल्ली (30 प्रतिशत), सोयाबीन चूर्ण (10 प्रतिशत), गेहू की भूसी या चोकर (20 प्रतिशत), चावल का छिलका (20 प्रतिशत) को अच्छी तरह मिलाकर पकाते हैं। फिर ठण्डा होने पर विटामिन एवं मिनरल (10 प्रतिशत) मिलाकर गोल–गोल बाल या गोला बनाकर केज अथवा तालाब के कई कोनों में टोकरी में रखकर दिया जा सकता है। संचयन अवधि के बाद 5 टन/हे. तक उत्पादन लिया जा सकता है।

एकीकृत (समन्वित) मछली पालन

पंकज पटियाल
केन्द्रीय अन्तर्स्थलीय मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान
बैरकपुर, कोलकाता– 700120, पश्चिम बंगाल

चौर प्राकृतिक रूप से छिछला एवं कम बहाव का होता है, जो जैविक सम्पदा से सम्पन्न माना जाता है पर इन जलीय संसाधनों का अब तक समुचित उपयोग नहीं हो पाया है, जिसका मुख्य कारण इस तरह के जल में बहुत सारे लोगों की भागीदारी होना अर्थात चौर के जल का बंटवारा करना। साथ–साथ आस–पास के लोग भी अपनी आवश्यकता के लिए भी इस पर निर्भर रहते हैं। फलस्वरूप किसी भी चौर का विकास करने के लिए उसके अगल–बगल के लोगों के लिए भी समुचित प्रबन्धन तथा भागीदार लोगों को जल का सही उपयोग करने का तरीका या तकनीक का इस्तेमाल करना चाहिए, जिससे चौर के विकास होने के साथ–साथ आस–पास भी समन्वित विकास संभव हो सके। चौर के बाहरी तरफ जिस तरफ पानी नहीं रहता हो वहां ऐसी फसलों का उत्पादन कर सकते हैं जिनमें पानी की कम से कम जरूरत हो जैसे की सरसों, मसूर इत्यादि, फिर थोड़ी सी जरूरत वाली फसल या फिर मवेशियों के लिए घास इत्यादि उगा सकते हैं। इस तरह से हम बेकार पड़े खेत को बिना पानी खर्च किये उपजाऊ भी बना सकते हैं। इसके अलावा चौर के पानी वाले इलाके में 3 फीट चौड़ा ऊंची बांध बनाकर उस बांध पर बागवानी कर सकते है, फल (पपीता, केला, अमरूद, नारीयल), सब्जियां (टमाटर, बैंगन, गोभी) इत्यादि उगा सकते हैं। दलहन (हरा चना, अरहर, मटर) इत्यादि भी उगा सकते हैं। औषधीय पौधे (धृत कुमारी, तुलसी, कालमेध, नीम, सहजन) इत्यादि का भी उत्पादन कर सकते हैं। इनके अलावा मुर्गी पालन भी किया जा सकता है। 3 फीट चौड़ा तथा 25–30 फीट लम्बा घर 25–30 मुर्गियों को पालने के लिए उपयुक्त होता है, क्योंकि एक मुर्गी के लिए 1 वर्ग फीट जगह की आवश्यकता होती है। साथ ही साथ जल क्षेत्र में मछली पालन के अलग–अलग तकनीकों का उपयोग किया जा सकता है। अलग–अलग तकनीकों के उपयोग में लाने से पहले, जल क्षेत्र की पारिस्थितिकी को समझने की आवश्यकता होती है।

एकीकृत मत्स्य पालन का अर्थ है 'फसल, मवेशी और मछलियों का एक साथ पालन करना'। एकीकृत पालन का मुख्य उद्देश्य है एकल पालन के अवशिष्ट पदार्थ का पुनर्चक्रण एवं संसाधनों का इष्टतम उपयोग करना। इस पालन में अवशिष्ट पदार्थों को फेंका नहीं जाता बल्कि उनका पुनर्चक्रण कर उपयोग किया जाता है। अतः यह जीविकोपार्जन एवं आय की दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण है। एकीकृत पालन कई प्रकार से किया जाता है जैसे – कृषि सह जलकृषि, मछली सह मुर्गी पालन, मछली सह बत्तख पालन एवं मछली सह अनाज खेती।

कृषि सह जलकृषि

इसमें उत्पाद का दीर्घकालिक तौर पर इष्टतम उपयोग होता है और वह भी स्थानीय रूप से उपलब्ध संसाधनों और तकनीकों के उपयोग से। यह पालन छोटे व गरीब किसानों के भरण–पोषण के लिए बहुत ही लाभकारी है। एकीकृत मत्स्य पालन से अतिरिक्त आय भी प्राप्त होती है। इस तरह के पालन के लिए विभिन्न तरह की फसल उपयुक्त होती हैं। फल (पपीता, केला, अमरूद, नींबू, सीताफल, अनानास, नारीयल), सब्जियां (चुकन्दर, करेला, लौकी, बैंगन, बंदगोभी, फूलगोभी, खीरा, ककरी, खरबूजा, मटर, आलू कोहरा, मूली, टमाटर), दलहन (हरा चना, काला चना, अरहर, राजमा, मटर), तिलहन (मूंगफली, सरसों, तिल, रेडी), फूल (गेंदा, गुलाब,

रजनीगंधा), औषधीय पौधे (धृतकुमारी, तुलसी, कालमेघ, नीम) आदि। चौर के पानी वाले इलाके में 3 फीट चौड़ा ऊंचा बांध बनाकर उस बांध पर बागवानी (पपीता, केला, अमरूद, नारीयल इत्यादि) कर सकते हैं। ग्रास कार्प के भोजन के लिए नेपियर घास की खेती तालाब के किनारे की जाती है। चौर से प्राप्त गाद एवं जलीय अपतृणों को खाद के रूप में प्रयोग किया जाता है। इस तरह से हम चौर के किनारे बेकार पड़े खेत को बिना पानी खर्च किये उपजाऊ भी बना सकते हैं।

मछली सह मुर्गी पालन

इस पालन में मुर्गियों के अवशिष्ट को पुनः चक्रण कर खाद के रूप में उपयोग किया जाता है। एक मुर्गी के लिए 0.3–0.4 वर्ग मी. जगह की आवश्यकता होती है। 50–60 पक्षियों से एक टन उर्वरक प्राप्त होता है। अतः ऐसे पालन में 500–600 पक्षियों से प्राप्त खाद एक हेक्टेयर क्षेत्र के लिए पर्याप्त होती है। इस पालन द्वारा 4.5–5.0 टन मछली, 70000 अण्डे और 1250 कि.ग्रा. मुर्गी के मांस का उत्पादन होता है। इसमें किसी अन्य संपूरक आहार और अतिरिक्त उर्वरक की आवश्यकता नहीं होती है। इस दृष्टिकोण से यह बहुत लाभदायक सिद्ध होता है।

मछली सह बत्तख पालन

इस पालन में मछली और बत्तख एक साथ पाली जाती है। जिस जल क्षेत्र में बत्तखों का पालन किया जाता है वह मछलियों के लिए आदर्श जलक्षेत्र हाता है, क्योंकि पारिस्थितिकी रोगमुक्त होती है। बत्तख जल क्षेत्र

में उपस्थित घोंघा, टैडपोल एवं पतगों के लार्वा ग्रहण करती है। इसके अलावा बत्तखों के अवशिष्ट के सीधे तालाब में गिरने से मछलियों के लिए आवश्यक पोषक पदार्थ की पूर्ति होती है। प्रत्येक बत्तख से 40–50 कि.ग्रा. खाद प्राप्त होता है। जिससे लगभग 3 कि. ग्रा. मछली उत्पादन होता है। बत्तख की औसत पालन दर 4 बत्तख प्रति वर्ग मी. होती है। एक बत्तख औसतन 200 अण्डे प्रति वर्ष देती है।

मछली सह मवेशी खेती

इस तरह के पालन से बहुत सारी संभावनाएं हैं। इसमें मछली के साथ गाय, बैल, भैंस तथा बकरी पालन किया जा सकता है। साधारणतः एक गाय, बैल या भैंस से 6 कि.ग्रा. एवं बकरी से 0.5 कि.ग्रा. खाद प्राप्त होती है। अतः एक वर्ष में एक मवेशी से 9000 कि.ग्रा. अवशिष्ट निकलता है। अनुमानतः 6.4 कि.ग्रा. गोबर से एक कि.ग्रा. मछली उत्पादन होता है। आठ गायों से प्राप्त गोबर एक हेक्टेयर जल क्षेत्र के लिए पर्याप्त होता है और इससे बिना किसी संपूरक आहार के 3–5 टन मछली का उपज ली जा सकती है। साथ ही गाय का दूध भी प्राप्त होता है।

मछली सह अनाज खेती

इस पालन में मछली के साथ अनाज की खेती होती है। इस तरह के पालन में मछली के साथ धान की खेती सर्वाधिक उपयुक्त होती है। धान का खेत पानी से भरा रहता है इसलिए इसमें धान के साथ कम खर्च में मछली पालान किया जाता है।

बिहार में टिकाऊ और स्थाई चौर मात्स्यिकी के लिए समूह दृष्टिकोण

डॉ. अपर्णा रॉय
केन्द्रीय अन्तर्स्थलीय मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान
बैरकपुर, कोलकाता– 700120, पश्चिम बंगाल

मिट्टी, पानी और वनस्पति तीन बुनियादी प्राकृतिक संसाधन हैं। निसंदेह, मानव जीवन प्राकृतिक संसाधनों पर निर्भर करता है, लेकिन प्राकृतिक संसाधन भी अपने स्थायित्व के लिए मनुष्यों पर निर्भर करते हैं। प्रकृति में ऐसे तरीके और उपाय हैं जो विभिन्न प्राकृतिक संसाधनों के बीच एक संतुलन सुनिश्चित करते हैं। प्राकृतिक संसाधनों के स्थाई प्रबंधन के माध्यम से ग्रामीण आजीविका में सुधार करना ही प्राकृतिक संसाधनों के प्रबंधन का सर्वसमावेशी उद्देश्य है। प्राकृतिक संसाधन ग्रामीणों की गरीबी दूर करने की आधारशिला है। गरीबी पर काबू पाने से अभिप्राय है व्यक्तिगत और सामूहिक सशक्तिकरण, उत्पादकता और आय के अवसरों को बढ़ावा देना। इसके लिए गरीब लोगों की गतिविधियों और उनके प्राकृतिक, सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक वातावरण की एक स्पष्ट समझ की आवश्यकता है। इसके अतिरिक्त सहायक नीतियों, संस्थाओं, सेवाओं और निवेश की भी आवश्यकता है।

प्राकृतिक मात्स्यिकी, बिहार के 40 प्रतिशत से अधिक ग्रामीण घरों में खाद्य सुरक्षा और आजीविका के लिए अत्यधिक महत्वपूर्ण है। भूमिहीन गरीब लोगों को जलग्रस्त/चौर क्षेत्रों और बाढ़कृत क्षेत्रों के प्रबंधन के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। इन जल स्त्रोतों का सहकारी, सामूहिक प्रबंधन और अधिक प्रभावी हो जाएगा अगर इनमें फसलों की खेती और मात्स्यिकी सामेकित रूप से हो। जलग्रस्त या चौर क्षेत्रों और बाढ़कृत क्षेत्रों में कई किसानों की जमीन जलमग्न होती है इसलिए समुदाय आधारित भागीदारी और सामूहिक प्रबंधन विकास का सबसे अच्छा और सफल मॉडल होगा। इसके लिए किसान संगठित किए जा सकते हैं ताकि वे संघर्ष को कम करते हुए साझा और सूचित निर्णय लेकर आपसी प्रतिबद्धताओं तक पहुँच सकें। इससे संसाधन के उपयोग को लेकर अनिश्चितता कम होगी और अंत में किसान अपने प्रयासों की लागत और लाभ दोनों में हिस्सेदार रहेंगे। इसके अतिरिक्त समुदाय आधारित सामूहिक दृष्टिकोण के निम्नलिखित बिन्दू हैं:

- मछुआरों और किसानों के लिए पर्याप्त टिकाऊ और लाभप्रद आजीविका प्रदान करेगा।
- अंतर्स्थलीय मात्स्यिकी और जलीय संसाधनों के विकास और प्रबंधन को बढ़ावा मिलेगा।
- उद्यम और रोजगार के अवसर उत्पन्न होंगे।
- स्थायी उपयोग के लिए मात्स्यिकी संसाधनों और मछली जैव विविधता का प्रबंधन होगा।

मछुआरों के समूहों का गठन

दो या दो से अधिक लोगों के पारस्परिक संपर्क एवं संवाद से एक समूह बनता है। यह समूह अनुभवों को साझा करने में, विचारों का संग्रह करने, प्रतिक्रिया देने और अनुभवों के विश्लेषण के लिए मंच प्रदान करने में सक्षम है। समूह से समर्थन, और आश्वासन का एक उपाय प्रदान होता है। इसके अलावा, एक समूह के रूप में, शिक्षार्थी भी परिवर्तन कार्यवाई के लिए सामूहिक रूप से योजना बना सकते हैं।

समूह की विशेषताएं

- यह दो या दो से अधिक लोगों से बनता है
- संचार और संवाद होना चाहिए
- संचार पारस्परिक होना चाहिए
- समूह तब तक रहता है जब तक पारस्परिकता मौजूद हो

कृषक रूचि समूह (FIG) अथवा आम रूचि समूह (CIG) अथवा मछली उत्पादन समूह (FPG)

आम लक्ष्य जैसे कि मत्स्य बीज उत्पादन, उत्पाद विपणन, पानी का बंटवारा, आकस्मिक जरूरतों को पूरा करना इत्यादि प्राप्त करने के लिए एक साथ आने वाले लोगों के समूह, एक कृषक रूचि समूह (FIG) अथवा आम रूचि समूह (FIG) अथवा मछली उत्पादन समूह बनाता है। दूसरे शब्दों में FIG अथवा FIGs स्वेच्छा से एक साथ आने वाला एक छोटा आर्थिक रूप से सजातीय और आत्मीयतायुक्त समूह है–

1. आम लक्ष्यों को पाने के लिए
2 आपातकालीन जरूरतों को पूरा करने के लिए
3. सामूहिक निर्णय के लिए
4. सामूहिक नेतृत्व और आपसी विचार, विमर्श के माध्यम से विवाद का समाधान करने के लिए

FIG अथवा FIGs की विशेषताएं

- समरूपता
- आम लक्ष्य
- आपसी सहायता
- सामूहिक कारवाई
- 10–20 सदस्य होने चाहिए
- भ्रांतियां दूर रखना
- प्रबंधन की कठिनाइयों को दूर करना
- समूह के सभी सदस्यों की सुनिश्चित भागीदारी
- समूह के सदस्यों में प्रभावी और नियमित पारस्परिक विचार–विमर्श के बीच

समूह गठन के चरण : समूह के गठन में चरण हैं :–

(I) समूह गठन के पूर्व का चरण

- प्रोत्साहक को नियमित यात्राओं से गांव में घनिष्ठता विकसित करनी चाहिए।
- गांव के वातावरण और लोगों के बारे में जानकारी एकत्रित करनी चाहिए।

(II) **प्रोत्साहन चरण :–**

(A) **समूह गठन**

उनकी एकरूपता ;जरूरत समस्या, जाति, व्यवसाय, खेल, आकार, लिंग, आय स्तरद्ध के आधार पर 15–20 किसानों को एक साथ आगे आने और समूह बनाने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

(B) **बुद्धिशीलता**

- इसमें स्तर, व्यक्तिगत और समूह के हित पेश किए जाते हैं
- नेतृत्व उभरना
- प्रक्रियाओं, नियमों और समूह के कामकाज की भूमिका का निर्णय करना।

(C) प्रतिमान

- सामंजस्य के लिए समूह के सदस्यों के बीच विश्वास विकसित करना।

(D) निष्पादन

- इस चरण में समूह का कार्य सम्पन्न करना होता है।

समूह को सुविधाजनक बनाना

एक समूह स्वचालित रूप से प्रभावी ढंग से कार्य नहीं कर सकता है, इसे सरलीकरण की जरूरत होती है। सरलीकरण को एक समूह के रूप में काम करते हुए सफलतापूर्वक अपने कार्य को करने की एक सचेत प्रक्रिया के रूप में वर्णित किया जा सकता है। सुगमता को खुद सदस्यों या एक बाहरी व्यक्ति की मदद से निष्पादित किया जा सकता है। प्रभावी ढंग से सरलीकरण के लिए सुविधाप्रदाता को यह समझने की जरूरत है कि समूह में एक साथ क्या हो रहा है और उसे कैसे सुविधाजनक बनाया जाए।

समस्या का समाधान

अधिकांश समूह समस्याओं का समाधान करने में खुद को असमर्थ पाते हैं क्योंकि वे बाहरी स्तर पर ही समस्या का व्याख्यान करते हैं। उसके बाद वे खुद अवरूद्ध हो जाते हैं क्योंकि वे समझ नहीं पाते कि समस्या कैसे उत्पन्न हुई है और वे इसे कैसे हल कर सकते हैं। इसलिए एक प्रभावी समस्या समाधान प्रक्रिया की निम्नलिखित विशेषताएं होनी चाहिए :–

1. स्पष्ट रूप से समस्या को परिभाषित करना : यह बाहरी सतह पर कैसी दिखाई देती है क्या है या वहां गहरा छिपा पहलू क्या है ?
2. अच्छी तरह से पता लगाने और समस्या के पीछे के कारणों को समझने का प्रयास करना
3. यदि आवश्यक हो तो कहीं से भी अतिरिक्त जानकारी लेना और इसका विश्लेषण करना

4. समूह को थोड़ी देर के लिए आलोचना और फैसले को निरस्त करने तथा एक दूसरे के विचारों का गठबंधन या उन्नति को बढ़ाने का प्रयास करना चाहिए। उद्देश्य इस तरह से बनाने चाहिए कि उनसे अधिक से अधिक विचारों और सुझावों को उत्पन्न किया जा सके। जब व्यक्ति ऐसी सोच रखने का प्रयास करते हैं तो इसे एक समूह में "बुद्धिशीलता" कहा जा सकता है।

समूह में निर्णय

समूह के सदस्य इंसान हैं इसलिए उनका अपना व्यक्तित्व होता है। समूह के प्रत्येक सदस्य को अपने विचारों (अलग सोच) को व्यक्त करने की जरूरत है। दूसरी ओर वही लोग अपने मतभेदों को संकीर्ण करके चर्चा को समापन (अभिसरण सोच) की दिशा में से जाना चाहते हैं।

आपसी संघर्ष

यदि उचित रूप से प्रबंधित किया जाता है तो संघर्ष एक समूह के लिए अच्छा हो सकता है। मतभेद दूर करके, समूह के सदस्य, गुणवत्ता फैसले कर सकते हैं और संतोषजनक पारस्परिक संबंध बना सकते हैं। एक समूह में संधर्ष का प्रबंधन करने के लिए हमें संधर्ष की पहचान करना और संघर्ष के संभावित स्त्रोतों का पता लगाना चाहिए। उसके बाद संधर्ष को कम करने के लिए एक रणनीति विकसित करके फिर योजना पर अमल करते हैं। उसके बाद इसका मूल्यांकन तथा समीक्षा की जाती है।

निष्कर्ष

समूह प्रभावी संगठनों के लिए संभावित महान शक्ति है और इन लक्षणों को पूरी तरह या आंशिक रूप से हासिल कर सकते हैं। समूहों में स्वाभाविक रूप से कुछ भी अच्छा या बुरा नहीं होता है। समूह का लक्ष्य समूह के लिए लोगों को आकर्षित करता हैं। अधिकांश समूह अधिकाधिक और अनौपचारिक दोनों कार्य करते हैं, वे संगठन और व्यक्तिगत सदस्यों की आवश्यकताओं को पूरा करते हैं।

विपरीत परिस्थितियों में चौर क्षेत्र के पानी का समुचित उपयोग

सुबोध कुमार
पूर्वी क्षेत्र के लिए भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का अनुसंधान परिसर
पटना– 800014ए बिहार

ब्रह्मांड में हो रहे अप्राकृतिक क्रियाकलापों के कारण पानी की समस्या बढ़ रही है। जहाँ वर्षा चाहिए वहाँ अकाल है, जहां कम पानी चाहिए वहाँ बादल फट रहे हैं। इससे हमारी दैनिक क्रियाओं के साथ कृषि क्रियाएँ भी ज्यादा प्रभावित हो रही हैं। पिछले कुछ वर्षों से बिहार में कम वर्षा हो रही है जिससे सूखे की समस्या बढ़ रही है। अतः पानी का समुचित उपयोग कर हमें तात्कालिक परिस्थिति से उभरने की आवश्यकता है जिसके लिए चौर क्षेत्र में उपलब्ध पानी का समुचित उपयोग कर जल उत्पादकता को बढ़ाना होगा। सर्वप्रथम हमें चौर एवं चौर के किनारे वाली ज़मीन को विभिन्न खंडों में बांटकर कृषि कार्य करना होगा जो निम्न प्रकार है :–

1. मत्स्य पालन

चौर में पानी हो तो मत्स्य पालन करना चाहिए।

2. चौर के किनारे वानिकी कार्यक्रम

चौर के किनारे हमें वैसे पौधों का रोपण करना चाहिए जो अधिक पानी भी सहन कर सकें, एवं पानी नहीं रहने पर भी हरा–भरा रह सकें। इसके लिए उपयुक्त प्रजातियाँ हैं– अर्जुन, जामुन, महोगनी, सहजन, बांस, बबूल, सुबबूल, खैर (कत्था) आदि।

3. चौर से सटे कृषि योग्य भूमि पर असंचित फसलों की खेती

इसके लिए हम ऐसी फसलों की खेती कर सकते हैं, जिनको पानी की कोई आवश्यकता नहीं पड़ती।

(क) गर्मा फसल :– फरवरी–मार्च के महीने में मूंग–तिल की मिश्रित खेती।

(ख) खरीफ फसल :– अगस्त में पशुओं के लिए चारा एवं हरी खाद तथा जलावन के लिए ढैंचा की खेती। सितम्बर से अरहर एवं तोरिया की खेती ।

(ग) रबी फसल :– नवम्बर के अंत में दलहनी फसल – मसूर, मटर, मेथी एवं धनिया की खेती।

4.एक से दो सिंचाई वाली फसलों की खेती

(क) गर्मा फसल :– ज्वार, बाजरा, भिंडी, मिर्ची।

(ख) खरीफ फसल :– मूंग एवं उरद, सफेद तिल, सब्जी में लौकी, नेनुआ, भिंडी, वर्षाकालीन मक्का एवं गेंदा।

(ग) रबी फसल :– काला एवं पीला सरसों की खेती, शरदकालीन टमाटर, पालक, कुसुम, साग, मूली, गाजर, चुकंदर।

5. दो से तीन सिंचाई वाली फसलों की खेती

इस खंड को भी गर्मी, खरीफ और रबी फसलों को ध्यान में रखकर फसल योजना बनानी चाहिए। इसमें खाद्यान फसल जैसे मक्का, धान, गेंहू, मौसमी सब्जी फूल, तंबाकू आदि की खेती कर सकते हैं।

(क) गर्मा फसल :– मक्का, प्याज, करेला एवं कद्दूवर्गीय फसल की खेती।

(ख) खरीफ फसल :– धान, मडुआ, बैंगन, खीरा, लाल–हरा साग, शल्क वाली प्याज आदि की खेती।

(ग) रबी फसल :– आलू, गेहूं, मक्का, शीतकालीन सब्जी, तंबाकू एवं फूल की खेती।

उपरोक्त फसलों की खेती से परिस्थिति एवं खेत को ध्यान में रखकर जीविकोपार्जन के साधनों का विकास होगा। इन सभी कृषि क्रियाओं में वैज्ञानिक तरीके से सिंचाई की तकनीक का प्रयोग कर जल–उत्पादकता को बढ़ाया जा सकता है। इसके लिए तीन कार्य अति आवश्यक हैं :–

(क) खेती योग्य भूमि का समतलीकरण :– इससे खेत में जरूरत के अनुसार पानी एक समान उपयोग होगा जिससे उत्पादकता में वृद्धि होगी।

(ख) मिट्टी की जांचः– फसल के अनुसार मिट्टी में पोषक तत्व नहीं होने से हम अनजाने में ज्यादा रासायनिक खाद का उपयोग करते हैं। मिट्टी की जांच से सामान्य सूक्ष्म पोषक तत्वों का उपयोग कर रासायनिक खाद के अधिक प्रयोग को रोका जा सकता है ।

(ग) सिंचाई प्रणाली में सुधारः– सिंचाई की नई वैज्ञानिक पद्धति जैसे– सिंचाई पाईप, फव्वारा, लेठा एवं टपक सिंचाई प्रणाली को अपना कर जल उत्पादकता में वृद्धि कर सकते हैं। सिंचाई पाईप से पानी को जहाँ जितनी जरूरत है भेज सकते हैं।

सिंचाई की जल संरक्षक पद्धतियां

फव्वारा एवं लेठा विधि से फसलों की एक समान मात्रा से सिंचाई की जाती है। टपक सिंचाई प्रणाली की भी दो पद्धतियाँ हैं– पहला पंपसेट से दूसरा– पुराने प्लास्टिक की बोतल या मटके में पानी भरकर पौधों के जड़ के पास बोतल या मटके में महीन छिद्र कर रख दिया जाता है और बूंद–बूंद पौधे की जड़ को पानी से नमी मिलती रहती है।

धान, पान और गन्ना ही ऐसी फसलें हैं जो पानी पीती हैं, बाकी सभी फसलें पानी चाटती हैं (थोड़ा पानी चूसती हैं)। अतः उपयुक्त तकनीक अपना कर एवं खेत में फसल चक्र अपना कर पानी की बचत की जा सकती है।